

**THE ECONOMIC TIMES**

**Date: 21-10-16**

## Power sector overdue for a dose of reforms



Power sector reforms are apparently “doing great”. The power ministry has even put out an e-book on its achievements and initiatives. But look closer, and the state power utilities seem to have hardly reformed. Reports say that Rajasthan power utilities plan to raise working capital funds with a bond issue. It points to moribund finances of power utilities and the triumph of hope over experience. Who would subscribe to such bonds? It is not an isolated case.

Reportedly, distribution companies in Uttar Pradesh are also set to float a bond issue to meet ‘operational requirements’. State power utilities are so broke that they are unable to raise working capital funds on their own. Gross, open-ended subsidies and giveaways have, for years, wrought havoc in their finances. Reports suggest that of the 16 states that are involved in the Centre’s power distribution utility revival scheme — Ujwal Discom Assurance Yojana (UDAY) — at least eight have been able to lower the gap between their average cost of electricity supply and their respective realisations. But it is entirely possible that the utilities concerned are actually running up higher losses due to increased offtake. We need transparency on utility bottomlines. The data must be published regularly. Short of superior political will, the powers that be would continue to provide patronage for open theft and diversion of electricity. And politically mandated tariffs and reckless giveaways lead to poor quality of power, which, in turn, stultifies growth and development. The way forward is to purposefully reform power distribution nationally. There is certainly a case for subventions, but these need to be budgeted and well targeted. To begin with, the utilities need to be mandated to announce quarterly results and follow-through action.

**Date: 21-10-16**

## The need of the hour is to invest massively in India’s cyber security



The malware attack executed reportedly via Hitachi card-reading and money-dispensing teller machines and point-of-sale equipment has compromised some 3.2 million debit cards of at least five banks. The data gleaned by this piece of malicious software has apparently been used to buy things and withdraw cash in China. This is a powerful wake-up call to the perils of the connected world. The point is not to go offline but to use ever better technology, systems and safety protocols to protect data. If someone wants to harm the economy, all he needs to do is to mess up the data for assets held in bank accounts and demat accounts.

The Bangladesh Central Bank experienced theft in which the thieves obtained email passwords of key personnel to begin their chain of fraud. The old saw about a chain being as strong as its weakest link holds true for the online world as well. Every company will have to invest in acquiring the hardware, software, intelligence, training of staff to adhere to strict protocol and customer education to secure not just customer data but their very existence. Contracts with all kinds of vendors would need to be rewritten to include penalty

clauses to cover systems compromise because of what they supply. Insurance and reinsurance would need to factor in the costs of expensive data breaches or learn to limit their exposure explicitly. The entire area of security in the connected world calls for technological mastery by agencies amenable to national control. This calls for determined leadership in the government, apart from dedicated and ample funding.

Will use of biometric data read off fingers or eyes make for greater safety at ATMs and point-of-sale terminals or will malware just capture these images and replicate them as well? Are our telecom networks vulnerable to quiet eavesdropping? Can we throw this open as a challenge to our IITs or anyone else who wants to come up with credible answers? We have the duty to keep our powder dry, even if you trust the power and integrity of thirdparty security firms.



## दैनिक भास्कर

Date: 21-10-16

### तरक्की के खिलाफ है तीन तलाक पद्धति



द टाइम्स दे आर ए चेंजिंग,' बॉब डिलन ने बरसों पहले गाया था, लेकिन दुर्भाग्य से तीन बार कहकर तलाक देने की पद्धति की शिकार सैकड़ों भारतीय मुस्लिम महिलाएं दुश्चक्र में फंस गई हैं, जिस पर पितृ सत्तात्मक समाज का नियंत्रण है। यह धक्कादायक है कि कई देशों में प्रतिबंधित तीन तलाक जैसी चिनौनी पद्धति को भारत में समर्थन मिल रहा है। इस्लाम के विद्वानों और महिला संगठनों ने कहा है कि इसका कोई धार्मिक अथवा कुरान में आधार नहीं है। इसके बावजूद ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड (एआईएमपीएलबी) सुधार के किसी भी प्रयास को धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप बताकर विरोध कर रहा है।

मुस्लिम समुदाय में एआईएमपीएलबी जैसे संगठनों को तीन तलाक जैसी प्रतिगामी और मनमानी पद्धति से महिलाओं का शोषण होने देने की बजाय सुधार के अग्रिम मोर्चे पर होना चाहिए। तीन तलाक के हिमायतियों को परवाह ही नहीं है कि यह शिकार महिलाओं की जिंदगी में कैसा विनाश ला रहा है। उनमें से कुछ ने तो राहत पाने के लिए अदालत के दरवाजे खटखटाए हैं। बहुलता अथवा विविधता के नाम पर भारतीय मुस्लिम महिलाओं को संविधान के तहत उपलब्ध समान दर्जा और गरिमा से वंचित कैसे किया जा सकता है, जबकि कई इस्लामी देश तीन तलाक व बहुविवाह पर पाबंदी लगा चुके हैं? इस पद्धति को भारत में कैसे इजाजत दी जा सकती है, जब इस्लामी देशों में वैवाहिक कानून बने हैं व उन्हें शरिया के खिलाफ भी नहीं माना गया?

यहां में अपने सहयोगी अरुण जेटली को याद करूंगा, जिन्होंने पूर्व में कहा है कि पर्सनल लॉ को भेदभाव फैलाकर मानवीय गरिमा के साथ समझौता करने नहीं दिया जा सकता और धर्म व्यक्ति के अधिकार तय नहीं कर सकता। गौरतलब है कि विभिन्न सरकारों ने बदलते वक्त की जरूरत के मुताबिक हिंदुओं और ईसाइयों के पर्सनल लॉ में संशोधन किए हैं। झूठा प्रचार किया जा रहा है कि किसी धर्म विशेष को निशाना बनाया जा रहा है। भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन (बीएमएमए) ने भी तीन तलाक को कुरान के बाहर की प्रथा बताया है, जिसे कानून बनाकर खत्म करने की जरूरत है। बीएमएमए की सह-संस्थापक नूरजहां साफिया नियाज और जाकिया

सोमण ने पिछले साल नवंबर में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को पत्र लिखकर बताया था कि उन्होंने देश के 10 राज्यों की 47,110 मुस्लिम महिलाओं के बीच सर्वे किया है। इसमें 92.1 फीसदी महिलाएं मौखिक/एकतरफा ढंग से दिए तलाक पर प्रतिबंध चाहती हैं और 91.7 फीसदी बहुविवाह के खिलाफ हैं।

एक न्यूज पोर्टल में लिखे लेख में दोनों ने कहा, 'तीन तलाक धर्म के कारण नहीं बल्कि धर्म के वेश में मौजूद पितृ सत्तात्मक व्यवस्था और सत्ता के खेल के कारण है। आम मुस्लिम महिला-पुरुषों को तलाक संबंधी न्याय व निष्पक्षता के कुरान के सिद्धांतों के बारे में शिक्षित करना महत्वपूर्ण है ताकि हर व्यक्ति जान ले कि तीन तलाक कुरान के विपरीत है।' ख्यात मुस्लिम लॉ एक्सपर्ट तारिक महमूद ने बीएमएम की रिपोर्ट की प्रस्तावना में तलाक के इस्लामी कानून का उल्लेख करते हुए लिखा, 'अपने मूल रूप में यह बेशक तर्कपूर्ण, यथार्थवादी और आधुनिक था, लेकिन गुजरते समय के साथ इसे इतना बिगाड़ दिया गया है कि पहचान में ही नहीं आता। इस्लामी कानून में ऐसा कुछ नहीं है, जो पति को तलाक के अधिकार का मनमाना और तर्कहीन इस्तेमाल करने की अनुमति देता हो।'

इस्लामिक फोरम फॉर प्रमोशन ऑफ मॉडरेट थाट के महासचिव ए. फैजुर रहमान ने भी पूर्व में कहा था कि एक बार में तीन बार कहकर तलाक देने को कुरान में मान्यता नहीं है। वक्त आ गया है कि उलेमा इसे अवैध करार दें। यहां में जोर देना चाहूंगा कि अनुच्छेद 14 और 15 भारतीय संविधान के बहुत महत्वपूर्ण अनुच्छेद हैं। वे भारतीय लोकतंत्र के मूल मूल्यों को साकार करते हैं। अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष सबको समान मानने का मूल्य देता है। इसमें कहा गया है, 'राज्य भारतीय क्षेत्र में किसी व्यक्ति को कानून के सामने समान मानने अथवा कानून का समान संरक्षण मुहैया कराने से इनकार नहीं करेगा।' जबकि अनुच्छेद 15 कहता है, 'राज्य किसी के साथ धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी एक के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा।' ऐसी कोई प्रथा जो महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक या भावनात्मक रूप से कमजोर बनाए, वह अनुच्छेद 14 व 15 की भावना के अनुरूप नहीं होगी। तीन तलाक का बचाव करने वाले इन लोगों ने कहा है कि इनके बचाव के लिए न तो सुप्रीम कोर्ट और न संविधान आगे आ सकता है, क्योंकि तीन तलाक शरिया से आया है। यदि शरिया इतना ही अनुल्लंघनीय है तो इतने सारे मुस्लिम देशों ने महिला के हक में आधुनिक कानून कैसे बनाएं? देश की सर्वोच्च अदालत का फैसला हर किसी पर बंधनकारी है, फिर उसका धर्म, लिंग और जाति कोई भी क्यों न हो। किसी को भी ऐसे बात नहीं करनी चाहिए, जिससे न्यायपालिका की गरिमा कम होती हो।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि कुछ राजनीतिक दल वोट बैंक की खातिर ऐसी प्रतिगामी, पिछड़े और महिला विरोधी पद्धति का बिना सोचे समर्थन कर रहे हैं। इसमें संदेह नहीं कि सुधार उन्हीं धार्मिक परम्परा से आने चाहिए। इसी वजह से तो राजा राम मोहन राय, दयानंद सरस्वती और अन्य हिंदू धर्म परम्पराओं में काफी हद तक सुधार लाए। तो आगे का रास्ता क्या है? यही कि विचार-विमर्श करें और जब भी आवश्यक हो जरूरी कदम उठाकर महिलाओं के शोषण को रोकें। विधि आयोग ने प्रश्नावली जारी कर जनता व संबंधित पक्षों से राय मांगकर यही किया है। इसमें न सिर्फ तीन तलाक बल्कि हिंदू महिला के उत्तराधिकार का अधिकार और गुजरात में अपनाए जा रहे मैत्री-करार का मसला भी है। फिर कोई यह आरोप कैसे लगा सकता है कि कवायद में एक ही धर्म को निशाना बनाया जा रहा है?

तीन तलाक को समान नागरिक संहिता से जोड़कर भ्रम फैलाया जा रहा है, जबकि तीन तलाक के मुद्दे का उद्देश्य तो लैंगिक न्याय और समान अधिकार सुनिश्चित करना है। आइए, इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर व्यापक बहस होने दें। कहने की जरूरत नहीं है कि वे सारी सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक परम्पराएं, जो समानता के कानून पर खरे नहीं उतरतीं, बदलनी चाहिए। इसी एकमात्र तरीके से भारत आधुनिक और समृद्ध राष्ट्र में रूपांतरित हो सकता है।

**वेंकैया नायडू केंद्रीय सूचना-प्रसारण और शहरी विकास मंत्री (ये लेखक के अपने विचार हैं।)**



**दैनिक जागरण**

**Date: 21-10-16**

## तीन तलाक पर पाबंदी जरूरी



पिछले कुछ वर्षों में हमारे देश में मुस्लिम महिलाओं की इंसाफ और समानता की आवाज उभर कर सामने आई है। हालांकि इक्का-दुक्का आवाजें पहले भी उठीं, लेकिन व्यापक स्तर पर देश में पहली बार साधारण मुस्लिम महिलाएं अपने अधिकारों की मांग कर रही हैं। इस मुहिम में तीन तलाक एवं निकाह हलाला जैसी कुरीतियों के खिलाफ जंग शुरू हो चुकी है। इस तरह की कई आवाजें सर्वोच्च अदालत तक भी पहुंच चुकी हैं। वक्त आ गया है कि देश में तीन तलाक एवं निकाह हलाला जैसी अमानवीय प्रथाओं पर पाबंदी लगे। इन कुप्रथाओं पर एक नजर डालने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि उन पर पाबंदी क्यों जरूरी है? तीन तलाक को खत्म करने के कई कारण हैं। पहली बात तो यह कि

तीन तलाक का कुरान में कोई जिक्र नहीं है और दूसरे यह क्रूर एवं अमानवीय प्रथा संविधान की रोशनी में भी जुर्म है। यह स्त्रियों के समान अधिकारों का हनन भी करती है। कुरान इस्लाम की सबसे बड़ी और आला किताब है। इसमें अल्लाह का संदेश दर्ज है। ताज्जुब है कि कुरान में तीन तलाक का कोई जिक्र न होने के बावजूद यह बदी आम मुसलमान औरतों की जिंदगी की बेरहम हकीकत बन गई है। अनेक मुस्लिम महिलाएं एकतरफा जुबानी तलाक का शिकार हो रही हैं। छोटी-छोटी बात पर तलाक बोलकर उन्हें घर से निकाल दिया जाता है। दाल में नमक कम है तो तलाक, मां-बाप के घर बिना इजाजत गई तो तलाक। कई बार तो नशे की हालत में भी तलाक दिए जा रहे हैं। इसके अलावा फोन और ईमेल के जरिये भी तलाक देने के मामले सामने आ रहे हैं। इस्लाम में शादी दो व्यक्तियों के बीच एक सामाजिक करार माना गया है। इस करार की साफ-साफ शर्तें निकाहनामा में दर्ज होनी चाहिए, क्योंकि कुरान में तलाक का अधिकार पति और पत्नी, दोनों को बराबर से दिया गया है। यही नहीं कुरान में तलाक को अति अवांछनीय बताया गया है। पैगंबर हजरत मुहम्मद ने कहा था कि अल्लाह को तलाक सख्त नापसंद है। कुरान की आयतों में साफ दर्शाया गया है कि अगर तलाक होना ही हो तो उसका तरीका हमेशा न्यायिक हो। कुरान की आयतों में कहा गया है कि अगर पति-पत्नी में क्लेश हो तो उसे बातचीत के द्वारा सुलझाने की कोशिश करें। जरूरत पड़ने पर समाधान के लिए दोनों परिवारों से एक-एक मध्यस्थ भी नियुक्त करें। समाधान की यह कोशिश कम से कम 90 दिनों तक होनी चाहिए। यदि तब भी मामला न सुलझे तो फिर न्यायपूर्ण तरीके से तलाक हो सकता है (2.226, 227, 229, 4.35, 128)। जाहिर है कि इन आयतों के चलते एकतरफा, जुबानी तलाक या जिसे आम तौर पर तीन तलाक कहा जाता है, का सवाल ही नहीं उठता। इसके बावजूद अचंभे की बात यह है कि हमारे देश में हनफी सुन्नी मुस्लिम समाज में तीन तलाक जारी है। इसके विपरीत शिया और अहले हदीस जैसे अन्य कुछ समुदाय तीन तलाक को वैध नहीं मानते। पड़ोसी मुल्क बांग्लादेश और पाकिस्तान के साथ-साथ दुनिया में कई मुस्लिम देशों में तीन तलाक वैध नहीं है। यहां हजरत मुहम्मद का एक वाक्या बताना जरूरी है। उनके सामने एक जोड़े के तलाक का मामला लाया गया और उन्हें यह बताया गया कि पति ने पत्नी को एक झटके में तलाक दे दिया है। पैगंबर इससे अत्यंत नाखुश हुए और उन्होंने कहा कि जब मेरी मौजूदगी में अल्लाह के पैगाम की तौहीन हो रही है तो मेरे बाद क्या-क्या होगा? दुःख की बात है कि उनकी यह चिंता सही साबित हुई। तीन तलाक या तलाक-ए-बिद्दत हजरत उमर के समय में एक समाधान के तौर पर अमल में लाई गई थी, लेकिन यह तलाक-ए-बिद्दत उस समय के कुछ सामाजिक प्रश्नों का फौरी हल मात्र थी। अब न तो वैसे सामाजिक हालात रहे और न ही वैसे प्रश्न। मुसलमानों को चाहिए कि वे कुरान में बताए तरीके के हिसाब से ही तलाक का



पालन करें। तीन तलाक को लेकर धर्म की आड़ में हो रही राजनीति की भी चर्चा आवश्यक है। हमारे देश में कुछ पुरुष-प्रधान एवं कट्टर विचारवाले समूह-संगठन अपने आपको मुसलमानों का रहनुमा होने का दावा कर रहे हैं, जबकि कुरान में अल्लाह और उनके बंदों के बीच किसी भी बिचौलिये का जिक्र तक नहीं है। यही नहीं कुरान में ऐसी अनेक आयतें हैं जहां अल्लाह औरत और मर्द, दोनों को एक साथ संबोधित करके अपना पैगाम देते हैं। आखिर ऐसे में आज की असल जिंदगी में मर्द औरत पर कैसे हावी हो गया? क्यों औरतों को दोयम दर्जा दे दिया गया है? यह सवाल उनसे हैं जो खुद को मुस्लिम महिलाओं के हितों के ठेकेदार की तरह पेश कर रहे हैं? अपने आपको मजहबी रहनुमा कहने वाले पितृसत्तात्मक गुटों ने मुस्लिम समाज पर अपनी पुरुष प्रधान एवं रूढ़िवादी समझ थोप रखी है। हैरत है कि तीन तलाक के कुरान के विपरीत होने के बावजूद वे उसे बरकरार रखने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा रहे हैं। ये वही गुट हैं जिन्होंने मुस्लिम पारिवारिक कानूनों में सुधार का हमेशा विरोध किया है और मुस्लिम स्त्रियों को अपने कुरान सम्मत अधिकारों से वंचित रखा है। इसी कानूनी सुधार के अभाव में मुस्लिम समाज में तीन तलाक, निकाह हलाला और बहुपत्नी जैसी कुरान विरोधी बर्बरतापूर्ण प्रथाएं चल रही हैं। आम मुसलमान यह बात बखूबी समझता है कि ये गुट अपनी सत्ता और अपने वर्चस्व के लिए काम कर रहे हैं, न कि कुरान के संदेश के लिए। मुस्लिम समुदाय हमारे देश का सबसे बड़ा अल्पसंख्यक समुदाय है। हमारा देश एक लोकतांत्रिक देश है। न्याय, समानता और धार्मिक स्वतंत्रता-ये सब संवैधानिक मूल्य हैं। इसी तरह जेंडर जस्टिस भी हमारे संविधान का मूल उसूल है। पवित्र कुरान में भी जेंडर जस्टिस एक अहम उसूल है। धार्मिक स्वतंत्रता का जितना संवैधानिक हक पुरुषों को है उतना ही स्त्री को भी। इस अधिकार को तोड़-मरोड़ कर उसका इस्तेमाल स्त्री दमन के लिए नहीं हो सकता। यह वाहियात दलील है कि हम अपनी औरतों के साथ क्या करें, यह हमारा अंदरूनी मामला है। सभी नागरिकों और सभी मुसलमानों को अन्य व्यक्ति के अधिकारों की फिक्र भी होनी चाहिए और उनका सम्मान भी करना चाहिए। आज हर देशवासी की तरह आम मुसलमान भी शिक्षा, रोजगार, तरक्की एवं खुशहाली चाहता है। मुस्लिम लड़कियां पढ़ना और आगे बढ़ना चाहती हैं। मुस्लिम महिलाएं भी सिर उठाकर अपने घर और समाज में जीना चाहती हैं। वे अपने कुरान सम्मत एवं संविधान सम्मत, दोनों ही अधिकार चाहती हैं। हमारे देश में अन्य अभी धार्मिक समुदायों की तरह मुस्लिम पारिवारिक कानून भी बनाया जाना चाहिए। हिंदू मैरिज एक्ट, हिंदू सक्सेशन एक्ट और क्रिश्चियन मैरिज-डाइवोर्स एक्ट, जिसमें 2010 तक सुधार हुआ है, के जरिये इन समुदायों की स्त्रियों को बहुत हद तक सामान अधिकार मिल गए हैं। अपनी अन्य बहनों की तर्ज पर मुस्लिम महिलाएं भी अपना अधिकार मांग रही हैं तो आपत्ति क्यों?

[ लेखिका जकिया सोमन, भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन की संस्थापक सदस्य और तीन तलाक केस में सुप्रीम कोर्ट में याचिकाकर्ता हैं ]



Date: 20-10-16

## Dirty picture

***Karan Johar's video exposes the weakness of government and the cave-in of Bollywood.***

A video over the upcoming film Ae Dil Hai Mushkil has been released — but it is far from entertaining. It features director-producer Karan Johar, taut with tension, attempting to explain casting Pakistani star Fawad Khan, then pleading for the film to be released, even as the MNS threatens violence against theatres screening

the film. In the video, Johar states how his “country comes first”, how he “salutes the Indian army” and how he’s always expressed “patriotism” through his work. Johar “beseeches” observers to know that his film involves the “blood, sweat and tears” of over 300 Indians and was shot during happier India-Pakistan times. Going forward, he says, he will certainly not engage talent from “the neighbouring country, given the circumstance”.

Karan Johar’s video is a sobering moment for India. Recent years have seen growing attempts by non-state actors — political groups, caste organisations, religious bodies — to browbeat filmmakers into shaping or breaking their creative works. In 2008, director Ashutosh Gowariker faced protests over his movie Jodhaa-Akbar, by groups in Rajasthan angry that the film showed a Hindu princess marrying a Mughal ruler. In 2013, Kamal Haasan was hounded over his film Vishwaroopam, the filmmaker so appalled by the bullying — and losses — he faced, he threatened to leave India. The same year, Sanjay Leela Bhansali faced protests over his movie’s title, which certain religious groups found offensive, forcing a mouthily renamed Goliyon ki Raasleela Ram-Leela instead.

But amidst both predictable and arbitrary demands, the consistent feature in these bullying scenes is the absence of the state, or its weak-kneed response. Even as filmmakers face groups threatening to vandalise property and hurt people if their demands aren’t met, the state mostly remains conspicuous by its silence. This silence — from Devendra Fadnavis’s government — is deafening now. In a diverse society like India, there will always be underemployed groups rushing in to attack creative expression. This is exactly where the state must firmly step in — and it is vital that the state of Maharashtra, which has seen an inglorious history of recent cave-ins, from dropping Rohinton Mistry’s novel from the syllabus in Mumbai University to letting strife over rationalists like Narendra Dabholkar grow under its watch until the latter’s murder, now speaks unambiguously for freedom. The more the state recedes — or lends tacit approval to goons — the less good governance it can claim. At the same time, powerful voices like Karan Johar’s mustn’t quiver either. His video bows before the same bullies filmmakers must stand up to. How a filmmaker works is creative, free choice, which must be defended consistently. Otherwise, no matter how many blockbusters Bollywood makes, it cannot have a happy ending.

---



**Date: 20-10-16**

## **A new censorship**

**The extralegal pressure successfully brought to bear on Bollywood to rid itself of all Pakistani presence is nothing but a triumph of mobocracy.**

In what has been described by many as a hostage video of sorts, film-maker Karan Johar on Tuesday pleaded for his film *Ae Dil Hai Mushkil* to be released on October 28 without violence or disruption. The assertion of his patriotism — that he puts his country before everything else, that he respects the Indian Army and the sentiments of the time — may have made his detractors gleeful but it was disappointing to see a powerful and influential Bollywood personality brought down to his knees by political bullies and coerced into saying that he will not engage with talent from the neighbouring country given the prevailing circumstances.



It happened on the same day a film delegation — comprising Mukesh Bhatt of Vishesh Films, Fox Star Studios CEO Vijay Singh, Disney India managing director Siddharth Roy Kapur and Apoorva Mehta of Dharma Productions — met the commissioner and joint commissioner of police in Mumbai who assured the film all protection against the threats by Maharashtra Navnirman Sena (MNS), that has been targeting it for having Pakistani actor Fawad Khan in a small role. To see Johar go so defensive then reveals the utter lack of trust and confidence in the city and State law and order machinery. At another level, it is also indicative of how a wave of hysteria can sweep away any signs of rationality in the

nation and the society. And, if this is the case with those in the film industry who are supposedly empowered, what to say of the smaller film-makers who have nowhere to run and hide? Meanwhile, the MNS, it seems, is still not in a mood to relent.

### A long history of bullying

This ‘capitulation’ may have elicited deep disappointment and outrage but is also not such a surprise especially if you look at the past and find Johar facing similar pressures at the time of the release of *My Name Is Khan* (when Shah Rukh Khan faced Shiv Sena wrath for questioning the non-inclusion of Pakistani players in the Indian Premier League teams) in 2010 and *Wake Up Sid* (2009) with the MNS objecting to the use of the word Bombay instead of Mumbai in the film. Unfortunately, there are no assurances against such bullying in the future either.

Johar is not the only one. There has been a long history of cinema falling prey to mobocracy aka extraconstitutional or extralegal censorship. Unofficial threats against films have been springing up at the slightest provocation despite getting cleared by the censors. In 1988, Govind Nihalani’s TV serial *Tamas* was targeted for ostensibly disturbing communal harmony. Film-maker Hansal Mehta was heckled, his face painted black by the Shiv Sena for an innocuous dialogue in his film *Dil Pe Mat Le Yaar!!* (2000) taken amiss by a community. Rahul Dholakia’s *Parzania* (2005), based on 2002 Gujarat riots, was obstructed by goons at the Goa film festival. In Gujarat the multiplexes refused to play it fearing riots. He was reportedly asked by the multiplexes to get approval from Babu Bajrangji, one of the main accused in the riots.

Often the extralegal censorship gets backed by the States citing law and order problems. The Supreme Court was moved after *Vishwaroopam* (2013) was banned by the Tamil Nadu government as some Muslim groups found it offensive. *Da Vinci Code* (2006) was banned in Andhra Pradesh, Goa, Tamil Nadu, Punjab, Nagaland and Mizoram for hurting Christian sentiments. The Mayawati government in Uttar Pradesh stalled Prakash Jha’s *Aarakshan* (2011) on the assumption that it showed Dalits in a bad light. Madhur Bhandarkar’s *Traffic Signal* (2007) didn’t get screened in Himachal Pradesh because the State government found the word “kinnar” for eunuchs objectionable as there happens to be a community of the same name in the State.

Those in the small, independent and documentary field fight extralegal censorship as a routine matter. The screening of Rakesh Sharma’s *Final Solution* (2004), on the Gujarat riots, was obstructed at Jawaharlal Nehru University by Akhil Bharatiya Vidyarthi Parishad activists and by the Hindu Jagran Manch at a film festival in Bangalore. Sanjay Kak found a private screening for friends of *Jashn-e-Azadi* (2007) stalled by the police in Mumbai. While the film industry, quite rightfully, has been fighting for an overhaul of the Censor Board, it is time it also braced itself to negotiate censorship by fringe groups as well that seem to operate akin to the extortion by roadside goondas portrayed in countless films. It needs to learn subversion and defiance beyond filmmaking, business acumen and managerial skills and stand together in opposition.

But that is easier said than done. While documentaries and smaller films can take recourse to subterranean rather than mainstream modes of release, the big-ticket films become more vulnerable because of the big money riding on them. No wonder Johar spoke of “300 of the cast and crew”, how it was not fair for them to

face turbulence. It gets even more problematic when an already divided film industry finds itself as polarised as the rest of the country.

## A new narrative of nationalism

The MNS has capitalised on the Uri attack and India's "surgical strikes" to manufacture a new narrative of patriotism, confined only to cinema, which implies eliminating everything Pakistan. Opportunistic organisations like Indian Motion Picture Producers' Association and Cinema Owners and Exhibitors Association of India followed suit without pausing and thinking things through. Zee Zindagi has been working towards replacing Pakistani serials with more "international" content. No wonder the Pakistani classic *Jago Hua Savera* got dropped from Jio MAMI 18th Mumbai Film Festival with Star on a complaint by a city-based organisation, Sangharsh. A pity when the festival otherwise scores many a progressive point through its selection of some radical films and by honouring the political, Sixth Generation Chinese film-maker Jia Zhangke.

Not only is the current cultural exchange being jeopardised, there is an attempt to sidestep history. This, when we are technically not at war with Pakistan, when the government hasn't really stopped any exchanges with it. The purging of *Jago Hua Savera* then is quite in tune with the unofficial sanitisation drive of the times. *Ae Dil Hai Mushkil* has just one Fawad Khan. The 1959 film, directed by A.J. Kardar, however, is a confluence of talent from the then East Pakistan, West Pakistan and India — the screenplay by revolutionary poet Faiz Ahmad Faiz based on an original story by Bengali writer Manik Bandopadhyay, Indian music director Timir Baran co-composing the music with Pakistani producer-composer Nauman Taseer, and an outstanding performance by Tripti Mitra (of the Indian People's Theatre Association). Ali Nobil Ahmad recently wrote on the film in *The Guardian*: "With Faiz's poetry, their pro-poor message of justice, solidarity and minimalist riverine aesthetics would not go amiss in today's subcontinent of bombastic nationalism, chauvinistic religion and unbridled capitalism..." If only one could have seen it.

**NAMRATA JOSHI**

---

**Date: 20-10-16**

## A closure of the Indian mind

A video released by film-maker Karan Johar pledging not to work with "talent from the neighbouring country" is obviously a last-ditch attempt to salvage his forthcoming production, *Ae Dil Hai Mushkil*. With the effect of a Rorschach test, Johar's pitch can be read in divergent ways. At one level, as an outright capitulation to the mob, angrily led in Mumbai by the Maharashtra Navnirman Sena, as well as to a wider audience currently consumed by a low-grade intolerance of anything Pakistani. At another, as a cleverly coded defence of a film starring Pakistani actor Fawad Khan by drawing attention to the labour of "300 Indians" on the project who face unfair rejection. Either way, the larger issue is the ease with which a boycott of people from a particular country is enforced, so that everyone is intimidated into falling in line to a Tebbit-like test. Mumbai has, of course, long kept Pakistani sportspersons at bay. Three years ago, the Pakistani women's cricket team at the World Cup had been shifted out to Cuttack, diminishing not just Mumbai, but India itself for the failure to uphold the spirit of sport essential to a liberal democracy. Last year, even Pakistani umpires and television commentators were compelled to pull out of their duties at an international match in Mumbai. It's not Mumbai alone. In 2013, for instance, no team fielded Sri Lankan cricketers in Indian Premier League matches in Chennai.

But the current, post-Uri rash of objections to Pakistani artists is widespread — concerts have been cancelled from Gurgaon to Bengaluru, and the airwaves crackle regularly with some film or sport personality averring to keep apart from his Pakistani counterparts. However, it would be under-reading the challenge to India's syncretic legacy if the political silence around such boycotts was not highlighted. It is not enough for officials at



the Centre to say that there is no change in the visa policy for Pakistani citizens. When the political leadership — in government and in Opposition — does not take the lead in persuading the silent majority that barriers to cultural and academic exchange are undemocratic and represent a closure of the Indian mind, it renders vulnerable the scattered individuals who are willing to stand up to bullying. On Pakistan, the ambivalent attitude to snapping cultural ties highlights important foreign policy questions. Do we use India's incredible soft power to win over Pakistanis and others to the ideals of democracy, liberalism, secularism, syncretism for the greater good of the neighbourhood? Or do we reduce all people-to-people contact to unrelenting enmity?



**Date: 20-10-16**

## उनका भी पाकिस्तान से मोहभंग होगा

इस बार ब्रिक्स का शिखर सम्मेलन कुछ खास था। यह हमारे शीर्ष स्तर के नेताओं के लिए एक मौका था कि वे रूस और चीन के नेतृत्व से बात करें और उन्हें उरी हमले के संदर्भ में पाकिस्तान को लेकर हमारी सोच व क्षमता से अवगत कराएं। लेकिन लगता है कि अपने-अपने हितों को लेकर ये दोनों देश अभी सीमा पार आतंकवाद के लिए पाकिस्तान की निंदा करने का जोखिम नहीं लेना चाहते। अलबत्ता, ब्रिक्स की घोषणा में इराक और सीरिया के आतंकवाद को खास तवज्जो दी गई और उस पर भारत का समर्थन हासिल किया गया है। इसका एक अर्थ यह भी है कि अब हम यह मान रहे हैं कि संयुक्त राष्ट्र को किनारे करके नाटो के कुछ सदस्य देशों ने पश्चिम एशिया के हालात बिगाड़े हैं, जिस कारण वहां कुछ आतंकी संगठनों ने आकार लिया है। ये संगठन अब इराक, सीरिया और लीबिया जैसे मुल्कों में काम कर रहे हैं, और हम बतौर ब्रिक्स सदस्य इसकी मुखालफत करते हैं।

इस लिहाज से हमें अब रूस और चीन को लेकर नई कूटनीति बनानी होगी। इन देशों के साथ द्विपक्षीय रिश्ते खराब करने से हमें फायदा नहीं होने वाला है, इसलिए कोशिश संबंध मजबूत करने की होनी चाहिए। जहां तक रूस का मामला है, तो उससे हमारे रिश्ते ठीक रहे हैं। मगर फिलहाल निजी हितों की वजह से वह पाकिस्तान की आलोचना से घबरा रहा है। इसीलिए रूस के उन हितों को भारत की तरफ मोड़ने की कोशिश होनी चाहिए, जो पाकिस्तान से जुड़े हैं। इससे हमारा भी फायदा है। जैसे कि हथियार व परमाणु ऊर्जा के लिए एटोमिक स्टेशन में रूस हमारी मदद कर सकता है। इस संदर्भ में कुछ समझौते हुए हैं, इसलिए उन्हें लागू करने में मुश्किल भी नहीं आने वाली।

रही बात चीन की, तो इसका अंदेशा पहले से था कि वह पाकिस्तान का साथ देगा। हालांकि इस संदर्भ में बीजिंग से हमारी बातचीत हुई थी, मगर तब भी उसने हमारे पक्ष में रुझान नहीं दिखाया। असल में, अभी देश-दुनिया के जो हालात बदल रहे हैं, उसमें बीजिंग की सोच यही है कि इस्लामाबाद से उसे ज्यादा फायदा होगा। अपने आर्थिक हितों को पूरा करने और पाकिस्तान की जमीन से उसे अशांत करने वाले आतंकी गुटों पर नकेल कसने के लिए वह उसकी तरफदारी कर रहा है। इसलिए हम चीन को तभी साध सकते हैं, जब मौजूदा प्रोत्साहन व हतोत्साहित करने यानी 'इंसेंटिव' व 'डिसिंसेंटिव' की हमारी कूटनीति थोड़ी और परवान चढ़े। हमारी कोशिश यही होनी चाहिए कि पाकिस्तान से चीन को जो फायदा हो रहा है, वैसा ही लाभ हम भी उसे दें, बशर्ते वह हमारे हितों का ध्यान रखे। इन्फ्रास्ट्रक्चर, सड़क, रेल या ऊर्जा-निर्माण के क्षेत्र में चीन को लुभाना हमारे लिए फायदेमंद हो सकता है। ऐसा किया जाना बहुत मुश्किल भी नहीं है।

दरअसल, आज नहीं तो कल, चीन का पाकिस्तान से मोहभंग होगा ही। इसकी एक वजह वहां की अस्थिरता भी है। बलूचिस्तान, गिलगित, पाक अधिकृत कश्मीर जैसे क्षेत्रों में हालात लगातार बिगड़ रहे हैं, और इनका जल्दी समाधान भी नहीं होने वाला। नतीजतन, चीन को वहां ज्यादा पूंजी लगानी पड़ सकती है। वहीं, दूसरी तरफ चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे को लेकर भी पाकिस्तान आवाम में चीन-विरोधी भावना बढ़ रही है। यह उसे पाकिस्तान से विमुख कर सकता है। तब उसे समझ में आएगा कि भारत के हित में ही उसके हित छिपे हुए हैं। चीन को यह समझाया जा सकता है कि पाकिस्तान खुद आतंकवाद से जिस तरह जूझ रहा है, उससे वहां की जनता उससे नाराज हो सकती है। इसी तरह, ब्रह्मपुत्र जैसी नदियों से पानी सीमित करने का मसला हम बिम्सटेक की मदद से सुलझा सकते हैं, क्योंकि चीन की कुछ नदियां बिम्सटेक देशों में भी जाती हैं। रही बात चीन-विरोधी मौजूदा माहौल की, तो चीनी उत्पादों के विरोध की मुहिम आम लोगों के स्तर तक ही रहनी चाहिए, उसे सरकारी स्तर पर लागू न किया जाए। अगर सरकार की तरफ से कोई चीन-विरोधी कदम उठाया गया, तो हम बेवजह विश्व व्यापार संगठन के दिशा-निर्देशों के उल्लंघन से जूझते दिखेंगे।

कुछ चीजों को लेकर हमें अपनी सोच बिल्कुल साफ रखनी चाहिए। मसलन, रूस और चीन का अमेरिका व पश्चिमी ताकतों से विरोध है। चीन को जहां पाकिस्तान के रूप में एक दोस्त और एक बाजार दिख रहा है, वहीं रूस भी यही मानता है कि उसके यहां आतंकी घटनाओं पर लगाम पाकिस्तान को साथ लेकर लगाई जा सकती है। उसके सामने अमेरिका एक नजीर की तरह है। अफगानिस्तान की लड़ाई में उसने पाकिस्तान का साथ लिया था। इसे इस तरह भी समझ सकते हैं कि बेशक हम रूस और चीन की आलोचना करें, मगर उसके साथ हमें अमेरिका जैसे पश्चिमी देशों का भी विश्लेषण करना चाहिए, जो पाकिस्तान की आलोचना के बावजूद उसका साथ देते हैं। नहीं भूलना चाहिए कि पश्चिमी देशों से जो इमदाद पाकिस्तान को मिलती है, उसी भरोसे उसकी अर्थव्यवस्था चलती है, जबकि चीन से तो उसे थोड़े हथियार और कूटनीतिक व रक्षा के मामलों में ही मदद मिल रही है। लिहाजा हमारी कोशिश चीन और रूस, दोनों को अपने साथ लाने की होनी चाहिए।

यह तय मानिए कि पाकिस्तान पर नकेल कसेगी, मगर इसमें थोड़ा वक्त लगेगा। असल में, हमें आतंकवाद के मुद्दे पर पाकिस्तान को अलग-थलग करने में सबसे ज्यादा सार्क और बिम्सटेक देशों से मदद मिल रही है। हमें इसी नीति पर आगे बढ़ना चाहिए। अगर हम इन देशों के साथ अपने रिश्ते मजबूत करते हैं, तो चीन, रूस, अमेरिका जैसी बाहरी ताकतें भी इस पर मंथन करेंगी कि भारत व इसके पड़ोसी देशों के पाकिस्तान के बारे में किस तरह के विचार हैं। बेशक पाकिस्तान पर प्रतिबंध लगाए जाएं, सर्जिकल स्ट्राइक जैसे आक्रामक कदम भी उठाए जाएं, मगर इसके साथ रूस व चीन के साथ इंसेंटिव और डिसिसेंटिव (प्रोत्साहन व हतोत्साहित) की कूटनीति भी मजबूत बनाई जाए। ध्यान यह भी रखें कि पाकिस्तान से इन देशों से जो हित सध रहे हैं, उन्हें हम पूरा करें। जरूरत यही है कि इन दोनों देशों को गले लगाते हुए पाकिस्तान पर दबाव बनाया जाए। मगर हां, अगर हमें कोई सीधे जख्म देने की कोशिश करता है, तो उसका मुंहतोड़ जवाब देने में भी हम परहेज न करें।

**लेखक- शशांक, पूर्व विदेश सचिव (ये लेखक के अपने विचार हैं)**

---